इकाई 18 नागरिक समाजः सामाजिक आंदोलन, गैर-सरकारी संगठन एवं स्वैच्छिक कार्य

संरचना

18.1 प्रस्तावना

18.2 नागरिक समाज : बदलते विचार

18.3 नए सामाजिक आंदोलन

18.4 आमूल परिवर्तनवादी लोकतंत्र के अभिकर्त्ता के रूप में नए सामाजिक आंदोलन

18.5 गैर-सरकारी संगठन एवं स्वैच्छिक कार्य

18.6 सारांश

18.7 अभ्यास प्रश्न

18.1 प्रस्तावना

पिछले कुछ दशकों से स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद अपनाई गई विकास संबंधी नीतियों पर समग्र रूप से पुनर्विचार किया जा रहा है। ऐसा आंशिक रूप से दोनों ही ग्रामीण तथा शहरी जनता और पहाड़ी क्षेत्रों की उपेक्षित जनजातियों की आज भी बरकरार सामाजिक-आर्थिक समस्याओं के कारण करना पड़ा है। विकास संबंधी ये नीतियां न केवल निर्धनता, निरक्षरता तथा स्वास्थ्य असुरक्षा की समस्याओं का हल ढूंढले में विफल रही हैं अपितु इनसे समस्याओं की वर्तमान सूची में नई समस्याएं आकर जुड़ गई हैं।

यदि हम अन्तर्निरीक्षण करें कि गलती कहां हुई तो लगभग अधिकांश विश्लेषणों में अंगुली निश्चित रूप से राज्य पर उठती है। सभी विफलताओं के लिए औपनिवेशिक भारत में राज्य केन्द्रित विकास दृष्टिकोण को दोषी माना गया है। यद्यपि विकास कार्य भारतीय जनतांत्रिक शासनतंत्र की विचारधारा संबंधी ढांचे और कार्य प्रणाली के तहत हुआ तथापि विकास परियोजना में राज्य तथा नौकरशाहों को दी गई केन्द्रीय भूमिका के कारण उन साधारण स्थानीय समुदायों, जिनके लिए विकास संबंधी कार्य कलाप चलाए जाने होते हैं , की वास्तविक लोकतांत्रिक भागीदारी नहीं हो सकी। आलोचकों का मत है कि यद्यपि ये नीतियां उनके नाम पर चलाई जा रही थीं तथापि ये उनके लिए हितकर सिद्ध नहीं हुईं।

इस ऐतिहासिक पृष्ठभूमि के मद्देनजर कई नए सामाजिक आंदोलन तथा स्वैच्छिक क्षेत्र उभरकर सामने आए जिनमें लोकतंत्र की मान्यताओं को सुदृढ़ बनाने के लिए विशिष्ट मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित किया गया था। सिद्धांतवादियों द्वारा किए गए विकास संबंधी प्रयोगों का परिणाम नागरिक समाज की श्रेणी के उदय के रूप में हुआ। राज्य की प्रबलता की तुलना में नागरिक समाज टिक नहीं पाया जिसके कारण विकासात्मक दृष्टिकोण को जन साधारण के कल्याण के निर्धारित लक्ष्य तक नहीं पहुंचाया जा सका। अतः इस प्रकार के विचारों के पक्षधरों का मानना है कि वास्तविक लोकतंत्र की स्थापना और विकास की प्राप्ति के लिए सबसे

पहले सक्रिय नागरिक समाज की पुनर्स्थापना करनी होगी। इस इकाई में हम विकास तथा लोकतंत्र के वैकल्पिक ढांचे से संबंधित परिसंकल्पनात्मक तथा प्रायोगिक पहलुओं पर चर्चा करेंगे।

18.2 नागरिक समाज : बदलते विचार

नागरिक समाज के बारे में बढ़ा-चढ़ाकर की जाने वाले समकालीन चर्चाओं का कारण रूस तथा पूर्वी यूरोप में समाजवादी शासनों का विघटन तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में साहचर्यात्मक बहुत्ववाद (Associational pluralism) को बढ़ावा देने वाली टोक्वेलियन परम्परा का पुनरोत्थान है। यह अनुमान लगाया गया है कि सोवियत संघ जैसे प्रयोग ऐसे राज्यों मे नागरिक समाज की अनुपस्थिति के कारण विफल हुए हैं। नागरिक समाज को उदारवादी लोकतांत्रिक राज्य की सम्पदा की संज्ञा दी गई है तथा किसी विकासशील नागरिक समाज को लोकतंत्र के अस्तित्व के लिए अनिवार्य माना गया है।

नागरिक समाज की संकल्पना का रोचक इतिहास है। यह सदैव उदारवादी लोकतांत्रिक सिद्धांतों का हिस्सा रहा है। उदारवादी विचारधारा के अनुसार नागरिक समाज का अधिकार क्षेत्र स्वतंत्र है परन्तु इसे राज्य का संरक्षण प्राप्त होता है जबकि अधिकार प्राप्त व्यक्ति अन्यों के सहयोग से निजी हित में कार्य करने को मुक्त है। यह परिभाषा नागरिक समाज को मुक्त बाजार अथवा मुक्त अर्थव्यवस्था तक सीमित कर देती है। बाद के उदारवादी विचारकों जैसे जे एस मिल (J.S. Mill) तथा एलैक्सिस डी टोक्विले (Alexis De Tocqueville) ने नागरिक समाज को सामाजिक साहचर्य का अधिकार क्षेत्र माना है जो राज्य के अतिक्रमण पर अंकुश लगा सकता है। उन्हें राज्य की बढ़ती हुई शक्तियों के कारण चिंता हुई तथा उनका मत था कि सामाजिक साहचर्य के बिना यहां तक कि लोकतांत्रिक शासन भी स्वेच्छाचारी शासन बन जाएंगे।

नागरिक समाज के संबंध में आरम्भिक मार्क्सवादी परिकल्पना, जो पूंजीवादी अर्थव्यवस्था के कार्यकलापों में महत्वपूर्ण योगदान देती है, के अनुसार नागरिक समाज के कार्यक्षेत्र को अति सीमित कर दिया है परन्तु यह नागरिक समाज को राज्य के अधीनस्थ मानने के लिए हीगल (Hegel) की आलोचना करने में सफल रही है। हीगल ने नागरिक समाज को मध्यस्थता का कार्यक्षेत्र माना है जहां आधुनिक समाज के लिए नैतिक आधार बनाने हेतु व्यक्ति के विशेष हितों तथा राज्य के सार्वभौमिक हितों का सामजस्य किया जा सके। हीगल ने आधुनिक लोगों में परम्परागत सामुदायिक संबंधों की कमी के कारण आधुनिक समाज में नैतिकता के ह्रास पर चिंता व्यक्त की। तथापि, अपनी विशिष्ट प्रवृत्तियों से युक्त नागरिक समाज को यदि अकेला छोड़ा जाए तो यह स्वयं को नष्ट कर लेगा। अतः हीगल के विचार में, यद्यपि नागरिक समाज में व्यक्ति की आधुनिकता की विलक्षण उपलब्धि विद्यमान है तथापि इसे राज्य के माध्यम से संगठित और संस्थानगत किया जाना चाहिए।

ग्रामस्की (Gramsci) ने मार्क्सवादी तर्क को आगे बढ़ाते हुए नागरिक समाज के बारे में हमारा ज्ञानवर्धन किया है। उत्पादन तथा आदान प्रदान के सम्पर्कों की प्रणाली की अपेक्षा ग्रामस्की के

मतानुसार इसकी विशेषता व्यक्ति तथा राज्य के बीच सामाजिक संबंधों में है। विविध संस्थानों, प्रक्रियाओं तथा नागरिक समाज से संबंधित सहवर्ती पौराणिक कथाओं तथा प्रतीकों के प्राधान्य अभिवेगों के माध्यम से राज्य की प्रबलता स्थापित करने के लिए सहमति बनाई जाती है। ग्रामस्की का दावा है कि प्राधान्य नागरिक समाज अथवा अधीनस्थ नागरिक समाज आवश्यक भीषण आर्थिक संकट के समय भी क्रान्तियां न होने के लिए उत्तरदायी है। ग्रामस्की के अनुसार, प्रधानता एक ऐसी रणनीति है जो सरलता से सर्वहारा तथा उपाश्रित लोगों की सम्पत्ति बन जाती है। ग्रामस्की ने अपनी क्रान्तिकारी रणनीति के तहत मध्यवर्ग के सभी विरोधियों के गठबंधन की मांग की है जिसका नेतृत्व सर्वहारा वर्ग द्वारा हो। ग्रामस्की का तर्क है कि इस गठबंधन से नागरिक समाज को नेतृत्व दिया जा सकेगा जिससे कि राजनैतिक समाज को चुनौती मिलेगी और इसे पुनः व्यवस्थित किया जा सकेगा।

ग्रामस्की के मत का महत्वपूर्ण आशय राजनैतिक है। यद्यपि ऐतिहासिक दृष्टि से नागरिक समाज द्वारा उपलब्ध कराए गए अन्तराल पर प्रबल वर्गों ने यथोचित व्यवहार करते हुए नेतृत्व किया परन्तु इससे अन्य सामाजिक कार्यकर्ताओं द्वारा नागरिक समाज को पुनः उचित रूप देने की पर्याप्त संभावनाएं सुझाई गई हैं। तथापि, हाल ही के वर्षों में पार्था चटर्जी तथा सुदिप्ता कविराज जैसे विद्वानों ने सामान्य तौर पर तीसरी दुनिया के देशों तथा विशेषकर भारत में नागरिक समाज से संबंधित रोचक तर्क दिए हैं। उन्होंने औपनिवेशिक हस्तक्षेप के माध्यम से थोपे गए पश्चिमी विचारों तथा अभिशासन के रूपों की कमियों तथा असंगतताओं की ओर ध्यान दिलाया है। इसके साथ-साथ इनसे काफी लम्बे समय से इन समाजों में राजनैतिक आधुनिकता लाने के प्रयासों के दौरान कई प्रक्रियाएं आरम्भ हो चुकी हैं। अतः भारतीय स्थिति को समझने के लिए समाज तथा नागरिक समाज के पश्चिमी विचार उपयुक्त नहीं है क्योंकि इन संस्थानों की प्रकृति यूरोपीय देशों से पर्याप्त भिन्न हैं। भारतीय स्थिति का मूल्यांकन करने के लिए राज्य तथा नागरिक समाज की परिकल्पनाओं के उपयोग से कई विसंगतियां उत्पन्न हुई हैं। वे उन विद्वानों के प्रयासों को संदेह की दृष्टि से देखते हैं जो राज्य की प्रधान भूमिका की निन्दा करते हुए नागरिक समाज को विशेषाधिकार दे रहे हैं। उनके मतानुसार भारत में राज्य उतना व्यापक नहीं है जितना कि पश्चिमी देशों में। राज्य की गौणता पर तर्क देने के लिए राज्य की पश्चिमी समालोचना मिथ्या है। पार्था ने भारतीय स्थिति को समझने के लिए एक नई परिकल्पना बनाई है – "राजनैतिक समाज" जोकि नागरिक समाज से भिन्न है। उन्होंने भारतीय लोकतंत्र में जनवाद के विभिन्न रूपों में उभरने का श्रेय राजनैतिक समाज के विकास को दिया है तथा जिससे उन्होंने राज्य तथा जनता के बीच विशेष संबंधों का उल्लेख किया है। नागरिक समाज की चर्चा में कविराज की अंतिम टिप्पणी अनुदेशात्मक है जोकि इस प्रकार है – "यह समस्या की प्रकृति ही है कि नागरिक समाज पर चर्चा से किसी निष्कर्ष पर नहीं पहुंचा जा सका है परन्तु इसका अर्थ यह नहीं है कि इन पर चर्चा का कोई लाभ नहीं हुआ है। राजनैतिक लोकतंत्र की स्थापना तथा इसके फलने-फूलने के लिए आवश्यक अवस्थाओं की प्रकृति पर इन चर्चाओं का सामूहिक प्रभाव पड़ा है। संक्षेप में तीसरी दुनिया के देशों में नागरिक समाज के विचार की दुग्राहयता तथा परस्पर प्रभाविता के कारण हमें दृष्टिगोचर राजनैतिक संस्थानों के पीछे के सामाजिक क्षेत्र के बारे में सोचना पड़ता है तथा अनिवार्य परन्तु कम विश्लेषित क्षेत्र की व्याख्या करने का प्रयास करना पड़ता है।"

18.3 नए सामाजिक आंदोलन

भारत में सबसे पहले सामाजिक आंदोलनों का आरम्भ सर्वोदय के रूप में गांधी जी के प्रयासों में देखा जा सकता है। गांधी जी ने सामाजिक परिवर्तन की आवश्यकता को समझा परन्तु उनका मानना था कि यदि परिवर्तन अहिंसापूर्ण, सफल तथा स्थायी बनाना हो, तो इसे नीचे से ऊपर के स्तर तक होना चाहिए। सर्वोदय गांधी जी के निर्माणकारी कार्यक्रम का स्पष्ट रूप है। राधाकृष्ण के अनुसार सर्वोदय का सैद्धान्तिक उदाहरण के रूप में ग्राम स्वराज्य के राज्य तथा श्रेणीरहित समाज की स्थापना करनी होगी, भूदान तथा ग्रामदान जैसे कार्यक्रमों के माध्यम से स्वैच्छिक रूप से संसाधनों के बंटवारे के सिद्धांत को अपनाना होगा। ग्रामीण उद्योगों तथा कृषि औद्योगिक समुदाय विकसित करना तथा औद्योगिक कार्यकलापों में ट्रस्टें बनाने की गांधीवादी परिकल्पना को लागू करना होगा परन्तु इस प्रकार नैतिक दबाव के दृष्टिकोण की सीमाओं का इतिहास साक्षी है। यद्यपि आरम्भ में भूदान के प्रति बहुत आशा थी किन्तु स्वैच्छिक तरीकों से भूमि के पुनः वितरण में भूदान की सम्पूर्ण विफलता ने सभी आशाओं पर पानी फेर दिया।

1970 के दशक के बाद से आधारभूत मुद्दों पर बल देने वाले कई सामाजिक आंदोलनों ने नागरिक समाज के क्षेत्र को जीवंत बना दिया है। ये पुरानी ट्रेड यूनियनों तथा श्रमिक वर्ग आंदोलनों की अपेक्षा "नए" हैं, जोकि क्रान्तिकारी, सिद्धांतयुक्त तथा राज्य का वैकल्पिक राजनैतिक रूप होने के कारण राजनैतिक थे परन्तु जैसा कि इन्हे जन आंदोलनों का नाम दिया गया है, ये पारिस्थितिकीय अथवा लैंगिक अथवा जातीय विवादों के प्रति व्यापक स्तर पर लोगों की प्रतिक्रिया का परिणाम हैं। इन आंदालेनों की विशेषता यह है कि ये समवर्गी नहीं हैं तथा उनका जन्म भिन्न-भिन्न रूपों में हुआ। जैसाकि विघ्नराज ने उल्लेख किया है कि कुछ आंदोलन धर्मार्थ संस्थानों, धार्मिक संस्थानों, "लघु सुंदर है" के समर्थकों इत्यादि, जिन्होंने लोगों को "अच्छे" कार्य करने की शिक्षा दी तथा गांव को सामजस्यपूर्ण इकाई तथा समुदाय समझा, द्वारा अपनाए गए रोमांचकारी तथा सैद्धान्तिक दृष्टिकोण का परिणाम हैं। कई मामलों में तो संचार माध्यम के योगदान तथा बुद्धिजीवियों के हस्तक्षेप के कारण स्थानीय स्तर पर की गई पहलों का एक-दूसरे में विलय हुआ जिन्होंने बड़े पैमाने पर आंदोलन का रूप धारण कर लिया।

जैसाकि विघ्नराज ने आगे उल्लेख किया है कि केवल "कुछ जन आंदोलन लम्बे समय तक टिक पाए, अन्य आंदालेन उद्‌गारी ही रहे तथा कुछ समय के बाद समाप्त हो गए .... इसी प्रकार से निचले स्तर पर हुए कुछ प्रयोगों में परिवर्तन के बीज विद्यमान होते हैं जबकि अन्य क्षणिक ही होते हैं।" उन्होंने यह स्पष्ट किया है कि परिवर्तनकारी तथा क्षणिक आंदोलनों में कैसे भेद किया जाए। परिवर्तनकारी आंदोलन की पहचान कुछ बड़े लक्ष्यों जैसे – संसाधनों में समानता तथा पहुंच; सामाजिक-राजनैतिक, सांस्कृतिक अधिकारों की समानता; कार्य, कल्याण, राजनीति इत्यादि को प्रभावित करने वाले सभी सामाजिक निर्णयों में वास्तविक भागीदारी; शारीरिक तथा बौद्धिक श्रम के बीच अंतर को समाप्त करना तथा इस उद्‌देश्य के लिए उपयुक्त प्रौद्योगिकी के उपयोग के रूप में की जा सकती है तथापि इसका अर्थ केवल उद्‌देश्यों का विवरण प्रस्तुत करना नहीं है अपितु सही अर्थों में भागीदारी, स्वयं उत्पादन तथा

स्वयं प्रबंधन, स्वायतता, पूर्ण एकता तथा नवीनता लाने की प्रवृति है। दूसरी ओर, क्षणिक आंदोलन, एक कमजोर प्रक्रिया है तथा कई करणों से लम्बे समय तक नहीं चलते। तथापि उन्होंने चेतावनी दी है कि क्षणिक आंदोलनों (बुलबुलों) का आरम्भ में ही परित्याग नहीं कर दिया जाना चाहिए क्योंकि वे परिवर्तन के लिए आरम्भिक मुद्दे हो सकते हैं तथा अतिरिक्त सुग्राहयता व जागरूकता कार्यक्रमों, सहायताकर्ताओं तथा परिवर्तन एजेंटों के प्रशिक्षण के माध्यम से इन्हें बीजों का रूप दिया जा सकता है। स्वरोजगार प्राप्त महिला संघ (Self Employed Women's Association/SEWA), चिपको आंदोलन, केरल विज्ञान आंदोलन (Kerala Science Movement/KSSP) तथा नर्मदा बचाओं आंदोलन (NBA) समिति बीज के उदाहरण हैं। कई असंख्य आंदोलन ऐसे हैं जिनमें विकास और लोकतंत्र के लिए संघटित, जागरूक और संगठित होने की डिग्री का अंतर रहता है।

सदैव यह आवश्यक नहीं है कि ये सभी की गई पहलें विकास के समरूप पैटर्न पर कार्य करें। उपलब्ध राजनैतिक कार्यक्षेत्र के अंतर्गत सामाजिक-आर्थिक प्रणाली में हस्तक्षेप होते रहते हैं। छोटे प्रयोगों के मामलें में, कोई अत्यधिक जागरूक व्यक्ति वार्ता तथा समूह कार्यकलाप आरम्भ करता है, उदाहरण के तौर पर यदि भूमिहीन श्रमिकों, निर्धन महिलाओं (युवाओं) का समूह आजीविका के साधन, या सामाजिक कार्य के लिए जैसे स्वास्थ्य अथवा पर्यावरण स्वच्छता कार्यक्रम चलाता है तो यह प्रक्रिया आगे चलकर बीज का रूप ले सकती है अथवा बुलबुले के ही रूप में रहती है जब तक कि वह फट नहीं जाता।

अब हम कुछ ऐसे आंदोलनों की चर्चा करेंगे जिन्होंने लोगों तथा पारिस्थितिकी के लिए प्रमुख चिंता के मुद्दों पर प्रकाश डाला गया है। इनमें सर्वप्रथम "चिपको" आंदोलन का नाम आता है। एक स्वतः आंदोलन के रूप में "चिपको" आंदोलन 1970 के दशक के आरम्भिक वर्षों में आरम्भ हुआ तथा श्री सुन्दरलाल बहुगुणा के योग्य नेतृत्व में यह संगठित हुआ। इसका आरम्भ टिहरी–गढ़वाल क्षेत्र के लोगों द्वारा बाहर के ठेकेदारों द्वारा पेड़ों को काटे जाने के विरोध के रूप में हुआ। हिमालय क्षेत्र में जंगल वहां की अधिकांश जनजातीय जनसंख्या की आजीविका का अपरिहार्य स्रोत है, "चिपको" का शाब्दिक अर्थ पेड़ों से "चिपकना" है। इस आंदोलन के अंतर्गत जंगलों पर आधारित समुदायों की समस्याओं जैसे – जंगलों की समाप्ति, मृदा अपरदन तथा उसके परिणामस्वरूप भू-स्खलन, स्थानीय जलधाराओं तथा अन्य जल संसाधनों का सूखना व घरेलू उपयोग के लिए ईंधन और चारे की कमी – को आवाज दी गई। इस आंदोलन में टिहरी-बांध के निर्माण के विरूद्ध जंग छेड़ी गई जिसके कारण लगभग 25,000 पर्वतीय निवासी बेघर हो जाएंगे। यद्यपि यह आंदोलन अपने सभी मुद्दों पर सफल नहीं रहा है तथापि इसकी कुछ उल्लेखनीय उपलब्धियां रही हैं। 1000 मीटर से अधिक की ऊंचाई पर वृक्ष काटने पर प्रतिबंध तथा कुछ जंगली क्षेत्र को सरकार द्वारा संरक्षित क्षेत्र की घोषणा इस आंदोलन की कुछ सफलताएं हैं।

अहिंसावादी तरीके से विरोध व्यक्त करने के आंदोलन के रूप में चिपको गांधीवादी संघर्ष का प्रतिरूप है। चिपको आंदोलन ने देश के अन्य स्थानों पर हरियाली बचाओ आंदोलनों को प्रेरित किया, इनमें सबसे प्रमुख आंदोलन पश्चिमी घाटों पर पेड़ों की कटाई तथा जंगल की भूमि पर

प्राकृतिक वृक्षों को काटकर व्यावसायिक पेड़ उगाने के विरोध में अपीको आंदोलन आरम्भ हुआ। चिपको आंदोलन का नारा है "परिस्थिति विज्ञान ही अर्थव्यवस्था है" (Ecology is Economy)।

एक अन्य सामाजिक आंदोलन अन्ना हजारे का रहा है जो दो दशकों से अधिक समय से राज्य में नौकरशाही तंत्र में पारदर्शिता की मांग कर रहा है। उनके आंदोलन ने महाराष्ट्र में उनके गांव शलेगान सिद्धी को मॉडल गांव बना दिया है। उनके आंदोलन में जन साधारण की कल्याण योजनाओं में सरकारी पहलू तथा कार्यान्वयन प्रक्रिया की जानकारी प्राप्त करने के अधिकार पर बल दिया गया है। सरकार पर "सूचना का अधिकार" (Right to Information) से संबंधित अधिनियम लाने के लिए दबाव दिया जा रहा है। इस कानून से लोगों की सरकारी रिकार्ड तक पहुंच होगी तथा इस प्रकार से सरकारी कामकाज में पारदर्शिता और जिम्मेदारी सुनिश्चित की जा सकेगी। इसके परिणामस्वरूप भ्रष्टाचार तथा रिश्वतखोरी की समस्या को रोकने में मदद मिलेगी।

वर्तमान समय का एक प्रमुख आंदोलन है – नर्मदा बचाओ आंदोलन समिति। मेधा पाटकर द्वारा चलाए गए इस आंदोलन में जल संसाधनों पर बढ़ते हुए दबाव के समाधान के रूप में बड़े-बड़े बांध बनाने के मुद्दे से संबंधित जागरूकता लाई गई है। यह आंदोलन नर्मदा नदी पर लगभग 3000 प्रमुख तथा गौण बांधों के निर्माण के विरोध में है जिससे लगभग 3,50,000 हैक्टर वन भूमि तथा 2,00,000 हैक्टर कृषित भूमि नष्ट हो जाएगी। लगभग 1 मिलियन लोगों के बेघर होने का अनुमान है।

महिलाओं, दलित सशक्तीकरण, भूमि उपयोग तथा पर्यावरण से संबंधित मुद्दों से संबंधित संघर्ष हुए हैं। नारी आंदोलनों में यद्यपि फ्रांसीसी तथा अंग्रेजी नारी अधिकारवादी आंदोलनों के समकक्ष कोई परम्परा नहीं रही है, तथापि वे ऐसे बिन्दू पर पहुंच गए हैं जहां वे लोकतंत्र की मान्यताओं तथा टिकाऊ विकास के मार्ग पर ले जाने से संबंधित उन सभी आंदोलनों में सामान्य कारण की पहचान कर सकते हैं। दलितों के आंदोलन भी इसी दिशा में आगे बढ़ रहे हैं।

अलग राज्यों तथा स्वायतता की मांग से संबंधित आंदोलन सामाजिक आंदोलनों की व्यापक श्रेणी के अन्तर्गत आते हैं। चाहे उनका जन्म स्रोत एक ही क्यों न हो, फिर भी विषम विकास तथा उनकी विशिष्ट समस्याओं के प्रति राज्य के प्रत्युत्तर देने की विफलता के कारण ये उप-राष्ट्रवादी तथा स्वायतता आंदोलन अन्य सामाजिक आंदोलनों से आधारभूत ढंग से भिन्न होते हैं। जहां अन्य सभी सामाजिक आंदोलन अन्तर्विष्ट हैं अर्थात् सभी के लिए खुले हैं, वहीं ये आंदोलन वर्ग विशेष के लिए हैं तथा सार्वभौमिक सिद्धान्तों की अपेक्षा विशिष्ट उद्देश्यों पर आधारित हैं।

18.4 आधारभूत लोकतंत्र के अभिकर्त्ता के रूप में नए सामाजिक आंदोलन

अर्नस्टा लैकलो (Ernesto Laclau) तथा चैंटल मौफ (Chantal Mouffe) ने नए सामाजिक आंदोलनों के उदय को सैद्धान्तिक रूप देने का प्रयास किया है। उनका सर्वप्रथम उद्देश्य पूंजीवाद तथा समाजवाद, दोनों के लिए वैकल्पिक सामाजिक काल्पनिकता उपलब्ध कराना है।

उनका मत है कि इन दोनों प्रणालियों में प्रधानता तथा अनुचितता के तत्व विद्यमान है। ग्रामस्की की ही भांति लैक्लाड तथा मौफ ने विभिन्न सामाजिक समूहों के राजनैतिक गठबंधन की प्रक्रिया के माध्यम से समवर्गता की मांग की है परन्तु ऐसा तभी संभव है जब गठबंधन के बीच किसी विशिष्ट समूह, जैसे कि ग्रामस्की की क्रांतिकारी रणनीति के अंतर्गत श्रमिक वर्ग के संबंध में, के किसी नेतृत्व का प्राधान्य न हो। इस प्रकार से उन्होंने किसी विचारधारा अथवा समूह द्वारा अन्य विचारधाराओं अथवा समूहों पर अपनी श्रेष्ठता लाने की अपेक्षा उनकी उग्र समतावादी विचारधाराओं के अनुरूप सभी को स्वीकार्य आम सहमति बनाने का आह्वान किया है। फॉक्लट के सत्ता विचार द्वारा प्रभावित इनका तर्क है कि सामाजिक शक्तियों को अब राज्य या अर्थव्यवस्था में केन्द्र में स्थित नहीं जाना जा सकता अपितु सामाजिक स्तर पर इसे उपयोग में भी लाया जाता है तथा इसका विरोध भी किया जाता है। ऐसे तर्क का राजनैतिक आशय राजनैतिक संघर्ष के किसी प्रतिबंधित क्षेत्र का अभाव है। लैकलो तथा मौफ ने एकीकृत परिदृश्य अथवा परियोजना के विरूद्ध नए सामाजिक आंदोलनों की विशिष्टताओं के कारण इनकी सराहना की है।

नए सामाजिक आंदोलन लोगों की इस विचारधारा के सूचक हैं कि वे उन विकास संबंधी उदाहरणों को स्वीकार नहीं करेंगे जिनमें वे शामिल नहीं करते हैं अथवा जिनमें उनकी भागीदारी को प्रतिबंधित करते हैं। वे क्रान्ति के माध्यम से राज्य की शक्तियों पर अपना कब्जा करने के बारे में चिंतित नहीं हैं, फिर भी वे जाने-अनजाने राज्य की प्रधान शक्तियों के समकक्ष शक्ति बना सकते हैं। ये नए सामाजिक आंदोलन वृहत समष्टि विकास प्रक्रियाओं के तरीकों का मानवीकरण भी करते हैं ताकि इस तथ्य का प्रदर्शन किया जा सके कि आधुनिक विश्व में सभी स्तरों पर समावेशन के तरीकों को बदला जा सकता है। इन आंदोलनों से यह भी पता चलता है कि लोग बहुपक्षीय तथा एक-साथ उत्पन्न समस्याओं का कैसे समाधान करते हैं।

जन-आंदोलनों का उदय समाजों तथा संक्रांतिकाल की संस्कृतियों के विशिष्ट विरोधाभासों से होता है। इनका जन्म राज्य की भूमिका से उत्पन्न विरोधाभासों तथा कमियों के कारण व बाहर के देशों द्वारा लगाई गई पूंजी के परिणामस्वरूप श्रम के विभाजन से हो सकता है। नए सामाजिक आंदोलनों से लोगों में पदानुक्रम एकता की अपेक्षा समस्तर पर एकता आई। राजेन्द्र सिंह के अनुसार, "परिस्थितिकीय आंदोलनों में राष्ट्र से बाहर के, बायोफिलिक सार्वभौमिकृत तथा नैतिक आंदोलन शामिल हैं। उनकी आधारभूत वचनबद्धता तथा मौलिक सिद्धांत उन्हें न केवल जाति, वर्ग, प्रजाति, धर्म तथा राष्ट्रों अपितु प्रजातीय श्रेणियों और जैविक व अजैविक दुनिया के विभाजन की श्रेणियों से ऊपर आसीन कर देते हैं। यह आंदोलन एक विलक्षण घटनाक्रम है जिससे कई बिन्दुओं पर विभक्त मानव को एकल मुद्दे पर इकट्ठा किया जा सकता है तथा एक मुद्दे पर संघर्ष करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है– सभी जीवित प्राणियों की प्रतिरक्षा-जन्मे या अजन्मे।

18.5 स्वैच्छिक कार्य एवं गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका

स्वैच्छिक कार्य की आधुनिक विचारधारा का जन्म प्रोटेस्टेंट ईसाई धर्म में है। परिकल्पनात्मक दृष्टि से, इसका अर्थ किसी भी ऐसे कार्य से है जो हम अपनी इच्छा से करते हैं न कि

मजबूरीवश। किसी कार्य के स्वैच्छिक होने के लिए महत्वपूर्ण है कार्य का उद्देश्यपूर्ण या अर्थपूर्ण होना। स्वैच्छिक कार्य की आवश्यकता तब पड़ती है जब लोगों को यह लगे कि समाज के वर्तमान सामाजिक-राजनैतिक तथा आर्थिक ढांचे के अंतर्गत समाज के कुछ पहलुओं की अनदेखी की जा रही है या यह हो सकता है कि ये संरचनाएं समाज में उत्पन्न होने वाले कुछ मुद्दों के प्रति प्रतिक्रिया व्यक्त करने की स्थिति में नहीं है। ऐसे कार्य को करने के लिए अभिप्रेरणा प्रायः व्यक्ति विशेष के स्वहित से संबंधित नहीं है।

किन्तु रजनी कोठारी का यह मत है कि स्वैच्छिक कार्य भारतीय सभ्यता का सार है। उनका तर्क है कि भारतीय सभ्यता का मूल सांस्कृतिक है न कि राजनैतिक। उन्होंने आगे तर्क दिया है कि ऐतिहासिक दृष्टि से भारतीय राज्य सदैव सीमान्त रहे तथा उनका कार्यक्षेत्र सीमित रहा। जाति, धर्म तथा व्यावसायिक हितों पर आधारित स्वैच्छिक संस्थाओं द्वारा समाज का वास्तविक कार्यकलाप चलाया जाता था। उनका यह भी दावा है कि "यदि कोई यह कहता है कि स्वैच्छिक कार्य भारत की अटूट विशेषता है तो इसका अर्थ केवल यह है कि कई स्थानों पर कई लोग किसी बाह्य कारक--राजनैतिक, नौकरशाह अर्थात बाजार की शक्तियों द्वारा कहे जाने के बिना बहुपक्षीय कार्यों में संलिप्त हैं। हाल ही के दशकों में जब आधुनिक राज्य अथवा इसके संस्थानों ने या तो भारतीय समाज के स्वैच्छिक लोकाचार में बाधा डालनी आरम्भ कर दी अथवा लोगों के स्वैच्छिक कार्यों में स्वयं को थोपना शुरू कर दिया, जिनके कारण राज्य द्वारा चलाए जाने वाले कार्यों तथा स्वेच्छा से आरम्भ किए गए कार्यों के बीच विभाजन की स्थिति उत्पन्न हुई है।" अतः, रजनी कोठारी का मानना है कि स्वैच्छिक कार्यों में आधुनिक समय में रुचि इस प्रकार से है जैसे कि सामाजिक जीवन में सामुदायिक प्रबंधन की देसी भारतीय परम्परा की ओर वापस जाना।

आइए अब हम आज की स्वैच्छिक संस्थाओं पर दृष्टिपात करें जिन्हें गैर-सरकारी संगठनों का पर्यायवाची माना जाता है यद्यपि दोनों के बीच सूक्ष्म अंतर है। गैर-सरकारी संगठन स्वैच्छिक कार्य का अकेला रूप नहीं हैं अपितु ये स्वैच्छिक कार्य क्षेत्र का एक हिस्सा हैं। गैर-सरकारी होना स्वैच्छिक कार्य के कई पहलुओं में से एक है। ईसाई मिशनरियों द्वारा स्वास्थ्य, शिक्षा तथा कई अन्य सुविधाएं उपलब्ध कराने के कार्यकलापों को कई विद्वानों ने भारत में स्वैच्छिक कार्यों में सर्वप्रथम माना है परन्तु इनका प्रमुख अंतर उन मान्यताओं से है जिनके अनुसार ये कार्य करते हैं। उनकी सेवाएं उस ईसाई मान्यता के अन्तर्गत आती है जिनके अनुसार वे विश्वभर में ईसा का संदेश पहुंचा कर सभी लोगों के लिए निर्वाण सुनिश्चित करना चाहते हैं। समकालीन गैर-सरकारी संगठनों का जन्म 1970 तथा 1980 के दशक में हुआ। यह वह समय था जब राज्य द्वारा किए जाने वाले कार्यों के प्रति लोगों में अविश्वास की भावना बढ़ती जा रही थी। राज्य तथा इसकी नीतियों की विफलता के प्रति प्रतिक्रिया के रूप में इनका जन्म हुआ। तब से लेकर आज तक गैर-सरकारी संगठनों की संख्या में बड़े पैमाने पर बढ़ोतरी हुई है। यद्यपि केवल 15,000 गैर-सरकारी संगठन पंजीकृत हैं, तथापि यह अनुमान है कि उनकी संख्या 50,000 तथा 1,00,000 के बीच हो सकती है। गैर-सरकारी संगठनों को राज्य के विकास कार्यों में योगदान देने में अपरिहार्य भूमिका के रूप में देखा जा रहा है।

सरकारी एजेन्सियों द्वारा अपनी नीतियों के कार्यान्वयन में गैर-सरकारी संगठनों के लिए भी विकल्प देने के प्रति विद्वानों की मिली-जुली प्रतिक्रिया है। कुछ का मानना है कि यह एक सकारात्मक दृष्टिकोण है जबकि अन्य इस मत से सहमत नहीं हैं। उनका मानना है कि यह नागरिक समाज में राज्य का बलपूर्ण हस्तक्षेप है तथा ऐसा राज्य द्वारा नव-उदारवादी मुद्दों को बढ़ावा देने के लिए किया जा रहा है। सारा जोसेफ का कहना है कि "1970 के दशक के अंतिम वर्षों में आपातकाल लागू होने के बाद स्वैच्छिक कार्यों में आई बाढ़ से, जिसे "निचले स्तर की राजनीति" (Grass root Politics) कहा गया, कुछ समय के लिए यह आशा जगी कि नए रूप की राजनीति का जन्म हो रहा था जिससे भारत में लोकतांत्रिक संस्थानों का नवीनीकरण किया जा सकेगा। यह आशा जताई गई कि लोकप्रिय दबावों तथा लोगों को संगठित और जागरूक करने के लिए काम में जुटी स्वैच्छिक संस्थाओं के कार्यों के परिणामस्वरूप लोकतंत्र का अधिक भागीदारीपूर्ण मॉडल उभर कर सामने आएगा। यह महसूस किया गया कि इनके हस्तक्षेप से लोगों की आवश्यकताओं तथा प्राथमिकताओं को अभिव्यक्ति मिल पाएगी तथा राज्य को अधिक जनापयोगी योजनाएं तैयार करने में सहायता मिलेगी।" यद्यपि सरकारी तथा अन्तर्राष्ट्रीय एजेन्सियों ने भी निचले स्तर पर सक्रियतावाद तथा गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका का उल्लेख किया है, जोसेफ का कहना है कि सरकारी रुचि लक्ष्यों की प्राप्ति तथा कार्य में कारगरता लाने के उद्देश्य से उन्हें उप-ठेकेदार के रूप में उपयोग में लाने में थी क्योंकि यह महसूस किया गया है कि वे नौकरशाही की अपेक्षा अधिक प्रतिज्ञाबद्ध तथा ईमानदार ढंग से कार्य कर सकेंगे और लोग उन्हें स्वीकार्यता देंगे।

विकास के क्षेत्र में गैर-सरकारी संगठनों का महत्व कार्य की गुणवत्ता में है,न कि मात्रा में। जैसाकि अनिल सी० शाह तथा सुदर्शन अयनगर ने उल्लेख किया है कि कई मामलों में जिन लोगों के लिए केवल गैर-सरकारी संगठनों ने काम किया है, वे बाद में सरकारी प्रणाली के निष्पादन में भी उन्हीं मानकों की मांग करते हैं तथा इसके लिए आंदोलन भी करते हैं। यद्यपि, सरकार द्वारा किए गए कार्य की मात्रा की दृष्टि से उनका योगदान नगण्य रहा है तथापि उनके कार्य की गुणवत्ता प्रभावशाली है। इस संबंध में गुजरात में आगा खान ग्रामीण सहायता कार्यक्रम (AKRSP) द्वारा किए गए कार्य उल्लेखनीय है। उन्होंने गैर-सरकारी संगठनों के कार्यकलापों की गुणवतता की जांच करने के लिए छह परिमाप बताए हैं जो इस प्रकार से हैं:

i) लोगों की भागीदारी;

ii) तकनीकी उत्कृष्टता;

iii) आर्थिक दृष्टि से सस्ता;

iv) उपेक्षितों तथा महिलाओं के लिए समानता;

v) संस्थानगत, वित्तीय तथा पर्यावरणीय टिकाऊपन; तथा

vi) जवाबदेही।

उनका तर्क है कि गैर-सरकारी संगठनों का स्तर सर्वोपरि रखना उनका दृष्टिकोण व तरीका है ताकि लोगों की भागीदारी सुनिश्चित की जा सके। "सौहार्दपूर्ण तथा अनौपचारिक ढंग से

कार्य करते हुए वे सरकारी एजेन्सियों की भांति लोगों की आवश्यकताओं तथा प्राथमिकताओं पर ध्यान ने देते हुए निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति हेतु विकास कार्य नहीं करते।"

इससे पता चलता है कि विकास कार्य से जुड़ी सरकारी एजेन्सियों के दृष्टिकोण में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है किन्तु वृहत सामाजिक-आर्थिक संरचनात्मक परिवर्तन की अपेक्षा दृष्टिकोण में परिवर्तन पर बल दिए जाने को क्रान्तिकारी परिवर्तन के समर्थक इसे अपनी बढ़ती हुई भूमिका को मान्यता दिलाने तथा अब तक सहयोग करते आए राज्य की भूमिका को गौण करने के षडयंत्र के रूप में देखते हैं।

18.6 सारांश

नागरिक समाज का राजनैतिक प्रक्रियाओं की चर्चाओं का बिन्दु बनना दो मुंही तलवार की भांति है। एक ओर तो, जन भागीदारी बढ़ाकर विकास प्रक्रिया के लोकतंत्रीकरण की आशा है तो दूसरी ओर इससे राज्य की वैद्यता को कम किए जाने का खतरा भी मौजूद है। यद्यपि गई गैर-सरकारी संगठनों ने स्वतंत्रता, लोकतंत्र, सामाजिक न्याय तथा टिकाऊ विकास की मान्यताओं को आगे बढ़ाने में सराहनीय कार्य किया है तथापि यह बात सदैव ध्यान में रखी जानी चाहिए कि वे सरकारी तंत्र की सुविधाएं नहीं जुटा सकते। जैसाकि एक विद्वान ने लिखा है कि "हजार गैर-सरकारी संगठन भी सरकार की भूमिका नहीं निभा सकते।" गैर-सरकारी संगठनों की जवाबदेही भी चिन्ता का एक अन्य विषय है। जैसाकि पहले ही बताया जा चुका है कि इनमें से अधिकांश विदेशी मुद्रा विनिमय अधिनियम (एफ सी आर ए) के अन्तर्गत पंजीकृत नहीं हैं परन्तु इनका महत्व उनकी भागीदारी से विकास के संभव लोकतांत्रिक तरीके जनता के समक्ष प्रस्तुत करने तथा इस प्रकार से लोगों को जागरूक करने में है कि वे सरकार पर दबाव डालकर विकास के तरीकों में सकारात्मक परिवर्तन ला सकें। स्वैच्छिक कार्यो के संबंध में हमें रंजनी कोठारी के आशावादी विचारों की ओर भी ध्यान देना होगा। उनका दावा है कि यद्यपि स्वैच्छिक कार्य में समकालीन रुचि राज्य की विफलता की प्रतिक्रिया के रूप में है, शीघ्र ही संभवतः हम स्वैच्छिक कार्यवाद के सकारात्मक तथा उदारवादी पहलुओं को देख पाएंगे। केवल भावी राजनैतिक घटनाक्रम ही उनके दावे को सही या गलत सिद्ध कर सकते हैं।

18.7 अभ्यास प्रश्न

1) क्या आप भारत के विकास की प्रक्रिया में सरकारी तंत्र की तथाकथित नकारात्मक भूमिका के संबंध में कई आलोचकों के तर्कों से सहमत हैं ? अपने मत के पक्ष में उपयुक्त तर्क दें।
2) नागरिक समाज के संबंध में बदलती हुई विचारधारा की विवेचना कीजिए एवं सार्वभौमिकरण के इस युग में इसे दिए गए समकालीन महत्व की आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।
3) टिकाऊ विकास की मान्यताओं को बढ़ावा देने तथा सीमान्त समुदायों के सशक्तिकरण में नए सामाजिक आंदोलन की भूमिका का आलोचनात्मक विश्लेषण कीजिए।
4) सरकारी एजेन्सियों के विकास संबंधी कार्यो में गैर-सरकारी संगठनों के योगदान तथा वर्तमान सार्वभौमिक युग में स्वैच्छिक क्षेत्र की भावी भूमिका की विवेचना कीजिए।

उपयोगी पाठ्य-सामग्री

अल्वी, हमजा, "पीजैंट्स एंड रेवोल्यूशन" इन ए0 आर0 देसाई (सम्पादक) *पीजैंट स्ट्रगल इन इंडिया* (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बाम्बे, 1979)

अहमद, इम्तियाज, पार्थ एस घोष और हेलमट रेफील्ड (संस्क॰), *प्लूरलिज्म एण्ड इक्युलिटि : वेल्यूज इन इण्डियन सोसायटी एण्ड पोलिटिक्स,* (सेज, नई दिल्ली, 2000)।

अमीन, समीर, *एक्यूमुलेशन आन ए वर्ल्ड स्केल : ए क्रिटिक आफ दि थ्यौरी आफ़ अण्डरडवलॅपमेंट,* (न्यूयॉर्क : मन्थली रिव्यू प्रैस, 1974)।

आरण्ट, एच.डब्ल्यू. दि ट्रिकल डाउन मिथ', *इकोनॉमिक डवलॅपमेंट एण्ड कल्चरल चेंज,* अक्टूबर, 1993)।

आरण्ट, एच.डब्ल्यू. *इकोनॉमिक डवलॅपमेंट : दि हिस्ट्री आफ एन आइडिया,* (यूनिवर्सिटी आफ शिकागो प्रैस, 1987)।

आर. के. राघवन, "द इण्डियन पुलिस : एक्सपैकटेसनस एण्ड ए डेमोक्रेटिक पॉलिटी", इन फ्रैनसिन आर. फ्रैंकल, ट्रान्सफौरमिंग इण्डिया एण्ड थ्री अदरस, (ऑक्सफोर्ड, न्यू दिल्ली, 2000)।

आस्टिन, ग्रेन्विल, *वर्किंग ऑफ ए डेमोक्रेटिक कॉन्स्टिट्यूशन : द इण्डियन एक्सपिरियन्स* (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2000)।

आमंड, गैब्रियल एंड वर्बा सिडनी, *द सिविक कल्चर* (लिटिल ब्राउन, बोस्टन, 1963)

आमंड, गैब्रियल, *कम्पैरेटिव पोलिटिक्स : ए डेवलेपमेंटल एप्रोच* (लिटिल ब्राउन, बोस्टन, 1956)

ऐन्थनी, एच0 बिर्च, *द कानसैप्ट एंड थ्यौरीज ऑफ डेमोक्रेसी* (रूटलैज, लंदन एंड न्यूयार्क, 2001)

ऑफे, सी0, एंड विसेन्थाल, ए0 1980, "टू लॉजिक्स ऑफ क्लेक्टिव एक्शन : थ्यौरिटिकल नोट्स ऑन सोशल क्लास एंड ओरगेनाइजेशनल फोर्म" *पोलिटिकल पावर एंड सोशल थ्यौरी,* 1, पी पी 67-115

भारत सरकार, लेबर ब्यूरो, 1993। इंडियन लेबर इयरबुक 1995, शिमला/चण्डीगढ़ 1997

डाण्डेकर वी.एम. एण्ड नीलकण्ठ रथ, *पॉअरटी इन इण्डिया,* 1971।

ए.के. शिंव कुमार "*पॉअरटी एण्ड ह्यूमेन डवलॅपमेण्ट इन इण्डिया*" यूएनडीपी, ऑकेज़नल पेपर 30।

बहल, विनय, "एटीट्यूड ऑफ द आई एन सी टुवड्र्स द वर्किंग क्लास स्ट्रगल इन इंडिया: 1918-1947" इन कुमार कपिल (सम्पादक), *कांग्रेस एंड क्लासिस : नैशनलिज्म, वर्कर्स एंड पीजैंट* (मनोहर, दिल्ली, 1988)

बचरच, पी0, *द थ्यौरी ऑफ डेमोक्रेटिक एलिटिज्म* (यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन प्रेस, लंदन, 1967)

बुकानन, जेम्स एम0, 1972, "टुवड्र्स एनालिसिस ऑफ क्लोस्ड बिहेवॉयरल सिस्टम" इन बुकानन, जे0 एम0 एंड टॉलिसन, आर0 डी0, सम्पादक, थ्योरी ऑफ पब्लिक चोव्यस, यूनिवर्सिटी ऑफ मिचीगन प्रेस एनी आरबोर, पी पी 11-23

बटलर, डेविड, लहरी अशोक एंड रॉय प्रणव, "इंडिया डिसाईड्स : इलैक्शन 1952–1995" इन पार्था चटर्जी (सम्पादक), 1998

--------, *एथनिसिटी एंड नैशनलिजम* : थ्यौरी एंड कम्पैरिज़न (सेज, नई दिल्ली, 1991)

ब्रास, पॉल आर0, *पोलिटिक्स इन इंडिया सिन्स इंडीपैन्डैंस* (फाउन्डेशन बुक्स, नई दिल्ली, इंडियन रिप्रिंट, 1997)

बाबा, नूरजहाँ, *डिवैलॅपमन्ट पॉलिटिक्स एण्ड एडमिनिस्ट्रेशन इन इण्डिया,* (उप्पल पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली, 2000)।

बोस, निर्मल कुमार, *स्टडीज़ इन गांधीज़म,* द्वितीय संस्करण, (इण्डियन एसोसिएट पब्लिशिंग कम्पनी लिमिटेड, कलकत्ता, 1947)।

बासु, दुर्गा दास, *इन्ट्राडेक्शन टू द इण्डियन कॉन्स्टिट्यूशन* (प्रेन्टिस-हॉल नई दिल्ली, 1985)।

बरधान, पी., *दि पॉलिटिकल इकोनोमी आफ़ डवलॅपमेंट इन इण्डिया,* (ओ.यू.पी., दिल्ली, 1984)।

----------, *इक्वेलिटी एण्ड इनक्वेलिटी,* (ओ.यू.पी., दिल्ली, 1983)।

बेती आन्द्रे, *"पॅवर्टी एण्ड इनक्वेलिटी", इकनोमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली,* 18-24 अक्टूबर, 2003।

बोटोमोरे, टी.बी., *क्लासैज इन मोडर्न सोसाइटी,* (एलेन एण्ड अनविन, लंदन, 1965)।

बोरडियो, एम. पियरे, *डिस्टिंक्शन्स,* (हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1984)।

बर्लिनर, जे., 'दि इकोनॉमिक आफ आवरटेकिंग एण्ड सरपासिंग', इन एच. रोसोवस्की (सं.), *इण्डस्ट्रीलाइजेशन इन टु सिस्टम,* एसेज़ इन ऑनर आफ ए गेर्सचेंक्रोन, (न्यूयॉर्क, जॉन विले एण्ड सन्स, 1966)।

बेनीफिल्ड, एम., *स्ट्रक्चरल एडजस्टमेंट: डेब्ट-कलेक्शन डिवाइज़, या डवलॅपमेंट पोलिसी,* टोक्यो, इंस्टिट्यूट आफ कम्पेरेटिव कल्चरल, (सोफिया यूनवर्सिटी, 1993)।

बिनैलो, जी0 सी0 एंड रसोपोलोस डी0, *द केस फोर पार्टिसिपेटरी डेमोक्रेसी* (कासमैन, न्यूयॉर्क, 1971)

भीखू पारेख, *"ए मिसकन्सीवड डिसकोर्स ऑफ पोलिटिकल ओबलिगेशन'* इन पोलिटिकल स्टडीज, जून, 1993

चन्दोख, नीरा, *स्टेट एंड सिविल सोसायटी* : एक्सप्लोरेशन्स इन पोलिटिकल थ्योरी, (सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1995)।

चटर्जी, पार्था (सम्पादक), *स्टेट एंड पोलिटिक्स इन इंडिया* (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, दिल्ली, 1998)

चटर्जी, रखाहरी, *वर्किंग क्लास एंड द नैशनलिस्ट मूवमैंट इन इंडिया* : द क्रिटिकल इयर (साउथ एशियन पब्लिशर प्राईवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1984)

————————(सम्पादक), *पोलिटिक्स इन इंडिया : द स्टेट-सोसायटी इन्टरफेस* (साउथ एशियन पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2001)

चटर्जी, वंदना, "विमिन एंड पोलिटिक्स इन इंडिया" इन आर० चटर्जी (सम्पादक), 2001

चेनेरी, होलिस एट., *रिडिस्ट्रीब्यूशन विद ग्रोथ,* (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस आन बिहाफ आफ दि वर्ल्ड बैंक, 1974)।

चौबे, शिवानी किंकर, *कॅलोन्यलिज़्म, फ्रीडम स्ट्रगल एण्ड नैशनलिज़्म इन इण्डिया,* (बुक लैण्ड, दिल्ली, 1996)।

चन्द्र वियन मुकर्जी, एम० मुकर्जी, ए० पानिकर, के० एन० एंड सुचेता महाजन, *इंडियास स्ट्रगल फोर इंडिपेंडेंश* (पेंग्विन बुक्स, नई दिल्ली, 1989)

डर्क्स, निकोलस, बी., *कास्टेस आफ़ माइण्ड : कोलोनिलिज़्म एण्ड मेकिंग आफ मोडर्न इण्डिया,* (पर्मानेंट ब्लेक, दिल्ली, 2002)।

ड्यूमो, मुई, *होमो हाइरार्कीकस : दि कास्ट सिस्टम एण्ड इट्स इम्पलिकेशन्स,* (ओ.यू.पी., दिल्ली, 1988)।

डेग हमर्स्कजोल्ड फाउण्डेशन, अनदर डवलॅपमेंट : दि 1975 डेग हमर्स्कजोल्ड रिपोर्ट आन इण्टरनेशनल कोपरेशन एण्ड डवलॅपमेंट, उप्पसाला, 1979।

डेब्क, मौरिसे, *स्टडीज इन दि डवलॅपमेंट आफ केपिटलिस्म,* (न्यूयॉर्क इण्टरनेशनल पब्लिशर्स, 1981)।

डैविड बेसलेय, *द पुलिस एण्ड पॉलिटीकल डवेलॅपमैण्ट इन इण्डिया,* (प्रिन्सटेन यूनीवर्सिटी प्रैस, प्रिन्सटेन, 1969)।

ड्रुकेर, पीटर एम., *पोस्ट-केपिटेलिस्ट सोसाइटी, (बटरवर्थ-हेनिमान,* ऑक्सफोर्ड, 1993)।

देशमुख, सी.डी., *इकॉन्मिक, डिवॅलॅपमेन्ट इन इण्डिया 1946-1956,* (एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1957)।

द्रीज जीन, एवं अमर्त्य सेन, (सं.) *इण्डिया : इकनोमिक डिवलॅपमेण्ट एण्ड सोशल अपोर्च्यूनिटी,* (ओ.यू.पी., दिल्ली, 1995)।

द्रीज, जीन, एवं अमर्त्य सेन, (सं.) *इण्डियन डवलॅपमेण्ट : सेलेक्टिव रीज़नल पर्सपेक्टिव्स,* (ओ. यू.पी, दिल्ली, 1997)।

दि एसाल्ट आन वर्ल्ड पॉअर्टी : प्राब्लम्स आफ रूरल डवलॅपमेंट, एजेकेशन एण्ड हेल्थ, (जॉन्स हॉप्किंस यूनिवर्सिटी प्रैस, बाल्टीमोर, 1979)।

दत्त गौरव"हेज़ पॉअरटी इन इण्डिया डिक्लाइण्ड ड्यूरिंग दि पोस्ट रिफोर्म पीरियड", (वर्ल्ड बैंक मिमीऑस, 1999)।

दत्त गौरव "पॉअरटी इन इण्डिया एण्ड इण्डियन स्टेट्स : एन अपडेट्", इण्टरनेशनल फूड पोलिसी रिसर्च इंस्टिट्यूट, वाशिंगटन, डी.सी., 1997)।

दत्त गौरव एण्ड मार्टिन रिवैल्यूएशन 1998(बी) "फार्म प्रोडक्टीविटी एण्ड रूरल पॉअरटी इन इण्डिया" जॉर्नल ऑफ डवलॅपमेण्ट स्टडीज़ 34:62-85।

डायमंड, लैरी, *डेवलपिंग डेमोक्रेसी,* (जॉन होपकिंस यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1999)।

डाउन्स, एन्थनी, *एन इकोनोमिक थ्यौरी ऑफ डेमोक्रेसी* (हार्पर, न्यूयार्क, 1957)

दंतवाला, एम0 एम0, हर्ष सेठी, एंड प्रवीण विरारिया (सम्पादक), सोशल चेन्ज थ्रू वालेंटरी एक्शन, (नई दिल्ली : सेज पब्लिकेशन, 1998)।

डॉहल, रोबर्ट ए0, ए प्रिफेस टू इकोनोमिक डेमोकेसी (यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस, बर्कले एंड लॉस एंजिलिस, 1985)

----------, ऑन डेमोकेसी (ईस्ट वैस्ट प्रेस, नई दिल्ली, 1998)

दासगुप्ता, विप्लव, द नक्सेलाइट मूवमेंट (एलाईड पब्लिशर, बाम्बे, 1974)

देसाई, ए0 आर0, (सम्पादक) पीसन्ट स्ट्रगल इन इंडिया (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बाम्बे, 1979)

__________, *कन्स्टिट्युअन्ट असेम्बली ऑव इण्डिया : स्प्रिंगबोर्ड ऑव रिवॅलूशन,* द्वितीय संस्करण, (मनोहर, नई दिल्ली, 2000)।

इटजिओनी, एमितै, *दि एक्टिव सोसाइटी,* (फ्री प्रैस, न्यू यॉर्क, 1968)।

इवेन्स, पीटर बी., रियूसचेमेयर, डाइट्रिच एण्ड स्कोपोल, थेडा (एड्स, ब्रिंगिंग दि स्टेट बेक इन, (कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस, 1989)।

इवेन्स, पीटर, *डिपेंडेण्ट डवलॅपमेंट : दि एलाइंस आफ मल्टीनेशनल,* स्टेट, एण्ड लोकल केपिटल इन ब्राज़िल, (प्रिंस्टोन : प्रिंस्टोन यूनिवर्सिटी प्रैस, 1979)।

इवेन्स, पीटर, एम्बेडेड आथरिटी : स्टेट्स एण्ड इण्डस्ट्रिअल ट्रांसफोर्मेशन, (प्रिंस्टोन : प्रिंस्टोन यूनिवर्सिटी प्रैस, 1995)।

फ्रान्डा, मारकस एफ0, रैडिकल पोलिटिक्स इन वैस्ट बंगाल (एम आई टी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1971)

गाडगिल, डी.आर. (1667) 'प्लानिंग विदऑउट ए पॉलिसी फ्रेम, इकोनॉमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, वोल्यूम 2, नंबर्स 3–5।

गेर्सचेन्क्रोन, ए., इकोनॉमिक बेकवर्डनैस इन हिस्टोरिकल पर्सपेक्टिव, (कैम्ब्रिज हारवर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, 1962)।

गुप्ता, दिपांकर, (सं.) *सोशल स्ट्रेटिफिकेशन*, (ओ.यू.पी., दिल्ली, 1991)।

ग्लायन एल. वुड. एण्ड डेनियल वाजीन्स, इण्डियन डिफेन्स पोलिसी : न्यू फेस, ऐशियन सर्वे, वोल्यूम ग्ग्प्ट, नं. 7, जुलाई 1984।

गुफ़, कथलीन, इंडियन पीसैन्ट अपराइसिंग, इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, अगस्त, 1974

गुप्ता, दीपांकर, राइवलरी एंड ब्रदरहुड : पोलिटिक्स इन द लाइफ ऑफ फारमर्स इन नारदर्न इंडिया (आक्फोर्ड, नई दिल्ली 1997)

हिर्स्चमान, ए.ओ., रावल व्यूज़ आफ मार्केट, सोसाइटि एण्ड अदर रिसेण्ट एसेज़, (न्यूयॉर्क, वीकिंग, 1986)।

हार्डग्रेव, रोबर्ट एल0, जूनियर एंड कोचानक स्टेनले ए0, इंडिया : गवर्नमैंट एंड पोलिटिक्स इन ए डेवलपिंग नेशन (हारकोर्ट ब्रेस जोवानोविच कालेज पब्लिशर्स, लंदन, 1993)

हौशर वाल्टर एंड सिंगर वैंडी, "द डेमोकटिक राइट : सेलिब्रेशन एंड पार्टिसिपेशन इन द इंडियन इलैक्शन" इन जयाल (सम्पादक), 2001

हसन, ज़ोया, "सैल्फ सर्विंग गारडियन्स : फारमेशन एंड स्ट्रेटेजी ऑफ द भारतीय किसान यूनियन", इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, दिसम्बर 2, 1989

हैल्ड, डेविड एंड किस्टोफर पोलिट, 1986, न्यू फौर्मस ऑफ डेमोकेसी, (सेज 1986)।

जयाल, नीरजा गोपाल (सम्पादक), डेमोकसी इन इंडिया (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2001)।

जोसेफ, सारह, "सोसायटी वर्सिज़ स्टेट", इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली, 26 जनवरी, 2002, पी पी 299-305।

जाना, अरूण के0 एंड शर्मा भूपेन, (सम्पादक), क्लास, आईडियोलाजी एंड पोलिटिकल पार्टिज इन इंडिया (साउथ एशियन पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 2002)

लेटॅच, सेर्जे, इन दि वेक आफ दि एफ्लूएण्ट सोसाइटि : एन एक्प्लोरेशन आफ पोस्ट-डवलॅपमेंट (जेड. बुक्स, लंदन, 1993)।

ल्यूइस, डब्लू. आर्थर, दि थिअरी आफ इकोनॉमिक ग्रोथ, (लंदन : एलेन एंड अनविन, 1959)।

लेस, कोलिन एण्ड मैरिस, पीटर, 'प्लानिंग एण्ड डवलॅपमेंट', इन डुडले सियर्स एण्ड लियानार्ड जोय (सं.) डिवलॅपमेंट इन ए डिवाइडिड वर्ल्ड, (पेग्विंन बुक्स, 1971)।

लिस्ट, फ्रैड्रिच (1885) दि नेशनल सिस्टम आफ पॉलिटिकल इकोनॉमि, (न्यूयॉर्क : अगस्टस केलै)।

लीटन, जी.के. एवं रवि श्रीवास्तव, *अनइक्वल पार्टनर्स, पावर रिलेशन्स, डिवॅलूशन एण्ड डिवैलॅपमन्ट इन उत्तर प्रदेश,* (सेज पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 1999)।

लैटिन, जार्ज किस्टोफेल, कोलोनियलिज्म क्लास एंड नेशन (के0 पी0 बागची, कलकत्ता, 1984)।

लिपसेट, एस0 एम0, 1960, "पार्टी सिस्टमस एंड द रिप्रेजेन्टेशन ऑफ सोशल ग्रुप्स," यूरोपियन जर्नल ऑफ सोशलोजी, 1, 50-85

लिजफर्ट, अरेन्दत, "द पज़ल ऑफ इंडियन डेमोक्रेसी : ए कन्सोसिएशनल इन्टरप्रिटेशन" इन जोयाल (सम्पादक), 2001

लायड आई0 रूडोल्फ एंड सुसेन होबर रूडोल्फ, इन परसूट ऑफ लक्ष्मी : द पोलिटिकल इकोनोमी ऑफ द इंडियन स्टेट (पेपरबैक एडीशन) (ओरियन्ट लॉगमैन, नई दिल्ली, 1998)

लवकोवोस्काई, ए0 आई0, *कैपटालिज्म इन इंडिया : बेसिक ट्रैंड्स इन इट्स डेवलेपमैंट,* (पापुलर पब्लिकेशन, बाम्बे, 1966)

लैकलो, अर्नस्ट, एंड चन्तल मौफ, हेगेमोनी एंड सोशलिस्ट स्ट्रेटेजी : टुवर्ड्स ए रेडिकल डेमोक्रेटिक पोलिटिक्स, (लन्दन : वर्सो, 1987)।

लेनबर्ग, सी0, "शरद जोशी एंड द फारमर्स : द मिडल पीसैन्ट लाइव्ज", पैसिफिक अफेयर्स 66 (फाल), 1988

मिरडल, गुनार, एसियन ड्रामा : एन इंक्वारी इनटु पॉअर्टी आफ नेशन्स, (पेनथिऑन, न्यूयार्क, 1968)।

भम्बरी, सी. पी., ब्यूरोक्रेसी एण्ड पॉलिटिक्स, (विकास, नई दिल्ली, 1971)।

मायर्स, चार्ल्स ए., *इण्डस्ट्रियल रिलेशन्स इन इण्डिया,* (एशिया पब्लिशिंग हाउस, बम्बई, 1958)।

मारकनडन, के॰सी॰, *डायरेक्टिक प्रिन्सिपल्स इन द इण्डियन कॉन्स्टिट्यशन* (अलाइड पब्लिशर्स, मुम्बई, 1966)

——————, *दि आइडिया आफ नेचुरल इनक्वेलिटी एण्ड अदर एसेज़,* (ओ.यू.पी., दिल्ली, 1987)।

———————, *केस्टे, क्लास एण्ड पॉवर,* दूसरा संस्करण, (ओ.यू.पी., दिल्ली, 1996)।

मेक्गिलव्रे, डेनिस बी., (सं.) *कास्ट, आइडियोलोजी एण्ड इण्टरेक्शन,* (कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1982)।

भगवती, जगदीश, "ग्रोथ, पॉअरटी एण्ड रिफोर्म्स", इकनोमिक डवलॅपमेण्ट्स इन इण्डिया, खंड 39।

भार्गव, बी.एस., *पंचायती राज सिस्टम एण्ड पॅलिटिकॅल पार्टीज़,* (आशीष, नई दिल्ली, 1979)।

मशग्रेव, आर0 ए0 एंड ए0 टी0 पीकोक, सम्पादक, क्लासिक्स इन द थ्यौरी ऑफ पब्लिक फाइनैंस, (मैकमिलन, लंदन, 1958)।

माइकल ब्रेकर। नेहरू : ए पोलिटिकल बायोग्राफी। (न्यूयार्क : ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस 1959)।

माथुर, जे0 एस0, इंडियन वर्किंग क्लास मूवमेंट (माथुर, इलाहाबाद, 1964)

मोहन्ती, मनोरंजन, रेवोल्यूशनरी वायलेन्स : ए स्टडी ऑफ मायोस्ट वायलेन्स (स्टरलिंग पब्लिशर्स, नई दिल्ली, 1977)

मैकलीन, इयान, एंड क्रिस्टोफर फोस्टर, 1992, "द पोलिटिकल इकोनोमी ऑफ रेगुलेशन : इनट्रस्ट, आईडियोलाजी, वोटर्स एंड द यू के रेगुलेशन ऑफ रेलवेज एक्ट 1884" पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, वाल्यूम 70 आटम 313-331

मैकलीन, इयान, डीलिंग इन वोट्स, (ऑक्सफोर्ड, मार्टिन रोबर्टसन, 1982)।

मैकलीन, इयान, पब्लिक चोव्यस, (एन इन्ट्रोडक्शन; बसिल, ब्लैकवैल, 1987)।

मेहता, उदय, "पीसन्ट मूवमेंट इन इंडिया" इन ए0 आर0 देसाई (सम्पादक) पीसैन्ट स्ट्रगल इन इंडिया (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बाम्बे, 1979)

नादकरनी, एम0 वी0, फारमर मूवमेंट इन इंडिया, (एलाइड, नई दिल्ली, 1987)।

ओलसन, एम0, द लॉजिक ऑफ क्लेक्टिव एक्शन : पब्लिक गुड्स एंड द थ्यौरी ऑफ ग्रुप्स, (हावर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1971)।

ओ' कोनर, जेम्स, दि फिसकल क्राइज़िज आफ दि स्टेट, (न्यूयॉर्क : सेंट मार्टिन'स प्रेस,1973)

ओविन्स, ई., दि फ्यूचर आफ फ्रीडम : इकोनॉमिक डवलॅपमेंट एज़ पॉलिटिकल रिफोर्म, (न्यूयॉर्क, प्रैंजर, 1987)।

पारेख बीखू "द कल्चरल पार्टिकुलेरिटी ऑफ लिबरल डेमोक्रेसी" इन. डेविड हैल्ड (सम्पादक) प्रोस्पेक्ट फोर डेमोक्रेसी। (स्टैंडफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस : यू एस ए 1993)।

पेट्राज़, जे. (1977) 'स्टेट केपिटेलिज़्म एण्ड दि थर्ड वर्ल्ड', डवलॅपमेंट एण्ड चेंज (811)।

पियोरे, माइकल, जे. एण्ड चार्लेस एफ. सेबल, दि सेकण्ड इण्डस्ट्रअल डिवाइज़ (न्यूयॉर्क: बेसिक बुक, 1984)।

पोलेनै, के., ग्रेट ट्रांसफोर्मेशन : दि पॉलिटिकल इकोनॉमिक आफ आवर टाइम, (न्यूयॉर्क, बिकोनी प्रैस, 1957)।

प्रेबिस्च, राउल, दि इकोनॉमिक डवलॅपमेंट आफ लेटिन अमेरिका इन दि पोस्ट-वार पीरियड, (न्यूयॉर्क : यूनाइटिड नेशन्स, 1964)।

पी. के मटट्र, "द सिविल सर्विस सिस्टम इन इण्डिया" इन एशियन सिविल सर्विस डवेलपमेण्ट्स एण्ड ट्रैण्ड्स (एडीसन) अमर रक्षासत्य एण्ड हैनरिच सीडनटोप, एशियन एण्ड पेसिफिक डवेलपमेण्ट एण्ड एडमिनिस्ट्रेसन सेण्टर, क्वालालम्पुर, 1980।

पीगो, ए0 सी0, *द इकोनोमिक्स ऑफ वेलफेयर,* चौथा संस्करण (मैकमिलन, लंदन, 1932)।

पैरी, जी0 (सम्पादक), पार्टिसिपेशन इन पोलिटिक्स, (मैनचेस्टर यूनिवर्सिटी प्रेस, मैनचेस्टर, 1972)

पैराजुली, प्रमोद, "पावर एंड नोलेज इन डेवलेपमैंट डिसकोर्स : न्यू सोशल मूवमेंट एंड द स्टेट इन इंडिया", इन जोयाल (सम्पादक), 2001

पेटमैन, कैरोल, पार्टिसिपेशन एंड डेमोक्रेटिक थ्यौरी, (कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1970)

पटनायक, उत्सा एवं हसन, जोया, "आस्पैक्ट ऑफ द फारमर्स मूवमेंट इन उत्तर प्रदेश इन जीद कान्टैक्टर ऑफ अनइवन कैप्टलिस्ट डेवलेपमेंट इन इंडियन एग्रीकल्चर" इन टी0 वी0 सत्यमूर्ति (सम्पादक) इन्डस्ट्री एंड एग्रीकल्चर इन इंडिया सिन्स इंडिपैन्डेंस (आक्फोर्ड, नई दिल्ली 1995)

कुज़नेट्स, सिमॅन, इकोनॉमिक ग्रोथ एण्ड स्ट्रक्चर, (नई दिल्ली : डब्ल्यू. डब्ल्यू. नोर्टन, 1955)।

कविराज, सुदीप्त एवं एस0 खिलनानी, (सम्पादक), सिविल सोसायटी : (हिस्टरी एंड पोसिब्लिटीज, फाउंडेशन बुक्स, नई दिल्ली, 2001)।

कविराज, सुदीप्त, ए क्रिटीक ऑफ पैसिव रेवोल्यूशन" इन चटर्जी (सम्पादक), 1998

कोठारी, रजनी, *पोलिटिक्स इन इंडिया,* (ओरियन्ट लॉगमैन, नई दिल्ली, 1970)

कोहली, अतुल, डेमोक्रेसी एंड डिसकन्टैंट : इंडियास ग्रोइंग क्राइसिस ऑफ गवर्नेब्लिटि, (कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, लंदन, 1990)

कुक, टी0 ई0 एंड मोरगन पी0 एम0, पार्टिसिपेटरी डेमोक्रेसी (हार्पर एंड रॉ, न्यूयार्क, 1971)

क्रोच, हेराल्ड, इंडियन वर्किंग क्लास (सचिन पब्लिकेशन्स, अजमेर, 1979)

क्रोच, हेराल्ड, ट्रेड यूनियन्स एंड पोलिटिक्स इन इंडिया (मानकतला, बाम्बे, 1966)

क्रूएगर, ए0 ओ0, 1974, *"द पोलिटिकल इकोनोमी ऑफ रैन्ट सीकिंग सोसायटी'*, अमरीकन इकोनोमिक रिव्यू, वाल्यूम 64, सं0 3, पृष्ठ 291-303

राव, बी. शिवा, *दि फ्रेमिंग ऑव इण्डिया'ज़ कॉन्स्टिट्यूशन : अ स्टडी,* (भारतीय जन प्रशासन संस्थान, नई दिल्ली, 1968)।

----------, *इनइक्वेलिटी रि-एक्ज़ामाइंड,* (क्लेरेनडॉन प्रैस, ऑक्सफोर्ड, 1992)।

राइकर, एच0 डब्ल्यू0 एंड आर्डरशूक पी0 सी0, "ए थ्यौरी ऑफ द कैलकुलस ऑफ वोटिंग" इन अमेरिकन पोलिटिकल साइंस रिव्यू, 62 : 1968।

रेवड़ी, चमनलाल, *द इंडियन ट्रेड यूनियन मूवमेंट* : एन आउटलाइन हिस्टरी 1880-1947 (ओरियन्ट लौंगमैन, नई दिल्ली)

संदल, एम0 लिबरलाइजेशन एंड द लिमिट्स ऑफ जस्टिस, (कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1982)

साहू, बासूदेव, *लेबर मूवमेंट इन इंडिया* (रावत पब्लिकेशन, जयपुर, 1999)

सेन, सुकोमल, वर्किंग क्लास ऑफ इंडिया : हिस्टरी ऑफ एमरजैन्स एंड मूवमेंट 1830-1990 (के0 पी0 बागची, कलकत्ता, 1997)

रोसन, जी., *वेस्टर्न इकोनॉमिस्ट्स एण्ड ईस्टर्न सोसाइटीज़* : एजेण्ट्स आफ चेंज इन साउथ एसिया, 1950-1970, (दिल्ली ओयूपी, 1985)।

रिचर्ड्सन ए0, पार्टिसिपेशन (रूटलेज एंड केगन पॉल, लंदन, 1983)

रिनोल्ड्स, एन्ड्रयू एंड रैली बेन (सम्पादक), इंटरनैशनल आई डी ई ए हैंडबुक ऑफ इलैक्टोरल सिस्टम डिजाइन (इंटरनैशनल इन्स्टीट्यूट फोर डेमोक्रेसी एंड इलैक्टोरल असिस्टैंस, स्टाकहोम, 1997)

सिंह, जगपाल, *कैप्टेलिज्म एंड डिपेन्डेन्स : एग्रेरियन पोलिटिक्स इन वेस्टर्न उत्तर प्रदेश* 1951-1991 (मनोहर, नई दिल्ली, 1992)।

स्मिटर, फिलिप सी0, *"इनट्रस्ट सिस्टमस ऑफ द कनसोलिडेशन ऑफ डेमोक्रेसीज'* इन गैरी मार्क्स एंड लैरी डायमंड (सम्पादक) रिएक्जामिनिंग डेमोक्रेसी, (सेज, नई दिल्ली, 1992)।

सिमिदत, डी0 सी0, सिटिजन लॉमेकर, (टेम्पल यूनिवर्सिटी प्रेस, फिलादेलफिया, 1989)।

शर्मा, जी0 के0, *लेबर मूवमेंट इन इंडिया* (यूनिवर्सिटी पब्लिशर, जालंधर, 1963)

शाह, घनश्याम, (सम्पादक) *सोशल मूवमेंट एंड द स्टेट* (सेज, नई दिल्ली, 2002)

शाह, घनश्याम, *सोशल मूवमेंट इन इंडिया : ए रिव्यू ऑफ लिटरेचर* (सेज, नई दिल्ली, 1990)

शुगार्ट, विलियम, "*द इनट्रस्ट ग्रुप थ्यौरी ऑफ गर्वनमैंट इन डेवलपिंग इकोनोमी परस्पैक्टिव' इन कीमेनयी*, मवांगी एस0 एंड जॉन मुकुम माकु, सम्पादक, इन्स्टीट्यूशन एंड कलेक्टिव च्वाइस इन डेवलपिंग कन्ट्रीज, (एशगेट, यू एस ए, 1999)।

शेरलॉक, स्टीफन, "रेलवे वर्कर्स एंड देयर यूनियन्स : ओरिजन्स ऑफ द 1974 इंडियन रेलवेज़ स्ट्राइक", *इकोनोमिक एंड पोलिटिकल वीकली*, अक्तूबर 14, 1989

शेरलॉक, स्टीफन, "*द इंडियन रेलवेज़ स्ट्राइक ऑफ 1974 : ए स्टडी ऑफ पावर एंड ऑरगनाइज्ड लेबर* (रूपा, नई दिल्ली, 2001)

साच्स, वोल्फगेंग (सं.) *दि डवलॅपमेंट डिक्शनरी : ए गाइड टु नोलिज एज़ पॉवर*, (जेड बुक्स, लंदन, 1992)।

सेन, अमर्त्य, *ऑन इकोनोमिक इनेइक्वेलिटी*, (बासिल ब्लेकवेल, ऑक्सफोर्ड, 1973)।

सीअर्स, डोडले, 'दि प्रेवलेंस आफ स्यूडो-प्लानिंग', इन माइक फेबर एण्ड, डोडले सीअर्स (सं.) *दि क्राइज़िज़ इन प्लानिंग, चाटो एण्ड विण्डूज़*, (लंदन, फॉर सूसेक्स यूनिवर्सिटी प्रैस, 1972)।

सिंह, तारलोक, *इण्डिया'ज़ डवलॅपमेंट एक्सपीरेन्स*, (दिल्ली, मेकमिलन, 1974)।

स्कोकपोल, टी., *स्टेट्स एण्ड सोशल रिवॅल्यूएशन्स*, (कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रैस, 1979)।

स्मिथ, बी सी, *अण्डरस्टेण्डिंग थर्ड वर्ल्ड पॉलिटिक्स : थियोरीज ऑफ पॉलिटीकल चेन्ज, एण्ड डवेलपमैण्ट*, (मैकमिलन प्रैस लिमिटैड, लंदन 1996)।

तुलपुले, बगराम, सेगमेन्टेड लेबर, फ्रैगमेन्टेड ट्रेड यूनियन्स इन टी0 वी0 सत्यमुर्ति (सम्पादक) *क्लास फोरमेशन एंड पोलिटिकल ट्रान्सफोरमेशन इन पोस्ट कोलोनियल इंडिया* (ऑक्सफोर्ड, नई दिल्ली, 1996)

टेलर चार्ल्स, *सोर्सिस ऑफ द सैल्फ*, (हार्वर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज : मास, 1990)

यूनाइटिड नेशन्स रिसर्च इंस्टिट्यूट फार सोशल डवलॅपमेंट (UNRISD), दि क्वेस्ट फार ए यूनीफाइड एप्रौच, जिनैवा, 1980।

वाडिया, पी.ए. एवं के.टी. मर्चेन्ट, *अवर इकॉन्मिक प्रॉब्लम*, (न्यू बुक कम्पनी लिमिटेड, बम्बई, 1950)।

वेलरस्टीन, इम्मेन्यूल, *दि मोडर्न वर्ल्ड-सिस्टम : केपिटेलिस्ट एग्रीकल्चर एण्ड दि विगनारजा, पूना (सं.), न्यू यॉर्क मूवमेंट्स इन दि साइथ : एम्पॉवरिंग दि पिपुल*, (जेड बुक्स, लंदन, 1993)।

वर्ल्ड बैंक, पॉअर्टी : वर्ल्ड डवलॅपमेंट रिपोर्ट 1990, (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रैस, 1990)।

विघ्नराज, पोन्ना, (सम्पादक), *न्यू सोशल मूवमेंट इन द साउथ* : एमपावरिंग द पीपल, (विस्तार पब्लिकेशन्स, नई दिल्ली, 1993)।

विद्यासागर, आर0, न्यू एग्रेरियनिज्म एंड द चैलेन्जिस फोर द लैफ्ट, इन टी0 वी0 सत्यमूर्ति (सम्पादक)। *क्लास फोरमेशन एंड पोलिटिकल ट्रान्सफोरमेशन इन पोस्ट कोलोनियल इंडिया* (ऑक्सफोर्ड, नई दिल्ली 1996)

वी0 के कारनिक, *इंडियन लेबर : प्रोब्लम एंड प्रोस्पेक्ट* (मिनर्वा एसोसिएट्स, किताब महल, कलकत्ता, 1974)

————————, इंडियन ट्रेड यूनियन्स : ए सर्वे (मानकतला, बाम्बे, 1966)

वारे, एलन, "द ब्रेकडाउन ऑफ डेमोकेटिक पार्टी ओरगेनाइजेशन 1940-1980, (ऑक्सफोर्ड, क्लेरेन्डन प्रेस, .1986)।

धनाग्रे, डी0 एन0, *पीसन्ट मूवमेंट इन इंडिया* 1920-1950 (ऑक्सफोर्ड, नई दिल्ली, 1991)।

यादव, योगेन्द्र, "रिकन्फिग्रेशन इन इंडियन पोलिटिक्स : स्टेट असैम्बली इलैक्शन्स 1993-1995" इन पार्था चटर्जी (सम्पादक), 1998

श्रीधरन, ई0, "द फ्रैगमेंटेशन ऑफ द इंडियन पार्टी सिस्टम, 1952-1999 : सैवन कम्पीटिंग एक्सप्लैनेशन्स" इन जोया हसन (सम्पादक), *पार्टिज एंड पार्टी पोलिटिक्स इन इंडिया,* (ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, नई दिल्ली, 2002)।

NOTES